सम्पादक की कलम से

भारत में राजनीतिक विरोध का ऐसा वातावरण इसके पहले कभी नहीं देखा है। लोकतत्र व्यवस्था में जनता के बीच स्वयं राजनीतिक लड़ाई हारे हुए समस्त विपक्षी गण अब भाजपा और केंद्र सरकार को घेरने के लिए संवैधानिक संस्थाओं को भी निशाना बनाने में परहेज नहीं कर रहे हैं। न्यायाधीश बीएच लोया की संदिग्ध मौत के मामले में निष्पक्ष जाँच की माँग को जब सुप्रीम कोर्ट ने खारिज कर दिया, तो कांग्रेस सहित विपक्षी दलों एवं उनके समर्थक कुछ बुद्धिजीवियों ने जिस प्रकार न्यायपालिका पर अविश्वास जताया है, वह बेहद आश्चर्यजनक होने के साथ साथ निंदनीय भी है। कांग्रेस के राहुल गांधी से लेकर अन्य प्रमुख नेताओं ने न्यायपालिका को कठघरे में खड़ा करने का प्रयास किया है। सुप्रीम कोर्ट ने स्वयं यह माना है कि इस प्रकरण के माध्यम से न्यायपालिका की विश्वसनीयता पर हमला बोला गया है। सुप्रीम कोर्ट का उक्त टिप्पणी ने कांग्रेस नेताओं के वक्तव्यों ने सही साबित कर दिया।

कांग्रेस के राहुल गांधी ने तो यह कह कर एक तरह से सुप्रीम कोर्ट की अवमानना ही की है कि अमित शाह का सच देश की जनता जानती है। उनके इस कथन का संदेश है कि उन्हें सुप्रीम कोर्ट पर विश्वास नहीं है। यह पहली बार नहीं है, जब कांग्रेस ने सबसे विश्वसनीय संवैधानिक संस्था पर अविश्वास जताया है, उसे कठघरे में खड़ा किया है। महात्मा गांधी की हत्या से लेकर हिंदू आतंकवाद और जज लोया के प्रकरण में कांग्रेस का व्यवहार न्यायपालिका की विश्वसनीयता को चोट पहुंचाने का रहा है। हाल ही में जब एनआईए की अदालत ने मक्का मस्जिद बम धमाके के मामले में असीमानंद सहित सभी आरोपियों को बरी किया, तब भी कांग्रेस के नेताओं के कथन न्यापालिका की विश्वसनीयता और स्वतंत्रता को धक्का पहुंचाने वाले थे।

जनता के बीच में लोकतांत्रिक लड़ाई हार रही कांग्रेस अब अपनी राजनीति न्यायपालिका के माध्यम से करना चाहती है। इसलिए जब उसे न्यायालय में भी मुंह की खानी पड़ती है, तो न्यायालय के बाहर कांग्रेस के नेता अपना आक्रोश निकालते हैं। सोहराबुद्दीन एनकाउंटर प्रकरण से जुड़े जज बीएच लोया की कथित संदिग्ध मौत के मामले में जाँच की माँग को ठुकराते हुए सुप्रीम कोर्ट ने उचित ही कहा- 'देखने में आ रहा है कि बिजनेस और राजनीतिक हित साधने के लिए सुप्रीम कोर्ट में जनहित याचिकाएं दाखिल की जा रहीं हैं। ऐसी जनहित याचिकाओं पर विचार करने में न्यायपालिका का काफी समय खराब होता है, जिससे दूसरे प्रकरणों में न्याय देने में देरी होती है। जिन मुद्दों को लेकर बाजार या चुनाव में लड़ाई होनी चाहिए, उन मुद्दों को लेकर सुप्रीम कोर्ट को अखाड़ा नहीं बनाना चाहिए।'

हरएक अवसर पर भाजपा, आरएसएस और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के विरुद्ध खड़े रहने वाले वकील इंदिरा जयसिंह, दुष्यंत दवे और प्रशांत भूषण को फटकार लगाते हुए सुप्रीम कोर्ट ने कहा- 'आप लोगों ने इस केस के बहाने न्यायपालिका पर सीधा हमला करना शुरू कर दिया। यह कहकर कि नागपुर गेस्ट हाउस में जज लोया के साथ ठहरने वाले चार न्यायिक अधिकारियों की बात पर भरोसा न किया जाए, जिन्होंने हार्ट अटैक से मौत की बात कही।' अपनी राजनीतिक जमीन को बचाने के लिए कांग्रेस ही नहीं, बल्कि कम्युनिस्ट एवं बुद्धिजीवी भी संवैधानिक संस्थाओं को कठघरे में खड़ा करने में सबसे आगे खड़े रहते हैं। कहना होगा कि कई मौकों पर कांग्रेस की दिशा भी कम्युनिस्ट ही तय कर रहे हैं, चाहे वह चुनाव आयोग का मामला हो या न्यायपालिका का। सुप्रीम कोर्ट ने याचिकाकर्ताओं और उक्त वकीलों के व्यवहार पर गहरी निराशा व्यक्त की है। न्यायालय का कहना था कि याचिकाकर्ताओं और उनके वकीलों को न्यायपालिका की गरिमा का ख्याल रखना चाहिए था, लेकिन इन लोगों ने उसको तार-तार कर दिया।

कम्युनिस्ट भारतीय जनता पार्टी और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर हमले करने के लिए मुद्दों की ताक में न केवल बैठे रहते हैं, अपितु खोज और खोद कर भी लाते हैं। जज लोया का प्रकरण भी ऐसा ही उदाहरण है। चूँकि जज लोया सोहराबुद्दीन शेख एनकांउटर मामले की सुनवाई कर रहे थे, इस प्रकरण में भाजपा अध्यक्ष अमित शाह का नाम भी शामिल है, इसलिए कम्युनिस्ट और कांग्रेस नेता इस मुद्दे पर राजनीतिक रोटियां सेंकने का प्रयास कर रहे थे। लेकिन, हुआ क्या, उनके ही हाथ जल गए।

बीजेपी की रणनीति के चलते आखिरी सांसें गिन रहे हैं नज़्सली

राष्ट्रीय जांच एजेंसी की आर्थिक नाकाबंदी व सुरक्षा बलों की सख्ती से कश्मीर के बाद अब नक्सलवाद को लेकर आंतरिक सुरक्षा को लेकर अच्छी खबर सुनने को मिल रही है कि कई दशकों से देश के विभिन्न हिस्सों में कत्लोगारत मचा रहा लाल आतंकवाद अब अंतिम सांसें गिन रहा है। साल 2010 में तत्कालीन प्रधानमंत्री स. मनमोहन सिंह ने इसे देश की सुरक्षा के लिए सबसे अधिक खतरनाक बताया था परंतु इस दशक का अंत आते-आते यह समस्या अब समाप्त होने को है। देश में पहले खालिस्तानी आतंकवाद के बाद यह दूसरी दहशतगर्दी की समस्या होगी जिसको निपटने में हम सफल होंगे। लाल आतंकवाद अंतिम सलाम कर रहा है परंतु अभी पिंडदान का समय नहीं आया है। याद रहे कि नक्सलवादी पलटवार में सिद्धहस्त हैं, इसलिए सावधान रहने व लड़ाई को तब तक जारी रखने की आवश्यकता है जब तक इसकी सांसें रुक नहीं जाती।

नक्सलवाद उस वामपंथी हिंसक आंदोलन का नाम है जो भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ। नक्सल शब्द की उत्पत्ति पश्चिम बंगाल के गाँव नक्सलबाड़ी से हुई है जहाँ भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता चारू मजूमदार और कानू सान्याल ने 1967 में सत्ता के खिलाफ एक सशस्त्र आंदोलन की शुरुआत की। मजूमदार चीन के कम्यूनिस्ट नेता माओत्से तुंग के बहुत बड़े प्रशंसकों में से था इसलिए इसे मोआवाद भी कहा जाता है। इनका मानना था कि भारतीय मजदूरों और किसानों की दुर्दशा के लिये सरकारी नीतियां जिम्मेदार हैं जिसकी वजह से उच्च वर्गों का शासन तंत्र और फलस्वरूप कृषितंत्र पर वर्चस्व स्थापित हो गया है। इस न्यायहीन दमनकारी वर्चस्व को केवल सशस्त्र क्रांति से ही समाप्त किया जा सकता है। 1967 में नक्सलवादियों ने एक अखिल भारतीय समन्वय समिति बनाई। इन लाल आतंकियों ने औपचारिक तौर पर स्वयं को भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी से अलग कर लिया और सरकार के खिलाफ भूमिगत होकर सशस्त्र लड़ाई छेड़ दी। 1971 के आंतरिक विद्रोह और मजूमदार की मृत्यु के बाद यह आंदोलन विभक्त होकर कदाचित अपने लक्ष्य और विचारधारा से विचलित हो गया। सामाजिक जागृति के लिए शुरु हुए इस आंदोलन पर कुछ सालों के बाद राजनीति का वर्चस्व बढ़ने लगा और आंदोलन जल्द ही अपने मुद्दों और रास्तों से भटक गया। बिहार में इसने जातिवादी रूप ले लिया।

1972 में आंदोलन के हिंसक होने के कारण चारु माजूमदार को गिरफ्तार कर लिया गया और कारावास के दौरान ही उसकी मौत हो गई। कानू सान्याल ने आंदोलन के राजनीति का शिकार होने के कारण और अपने मुद्दों से भटकने के कारण तंग आकर 23 मार्च, 2010 को आत्महत्या कर ली। गरीबों, वनवासियों व गिरीवासियों के अधिकारों के नाम पर अस्तित्व में आए नक्सलवादी या माओवादी आजकल हत्या, फिरौती, रंगदारी, लेवी वसूली, सामुहिक दुष्कर्म, नक्सली शिविरों में बच्चियों के यौन शोषण, विकास में बाधक, गरीबों का शोषण करने के लिए कुख्यात हैं।

आज से दस-बारह साल पहले देश के 12 राज्यों के 165 जिले इस आतंकवाद की चपेट में आगए थे। यह समय था यूपीए सरकार के कार्यकाल का जिसमें वामपंथी दल कांग्रेस के साथ मिल कर केंद्रीय सत्ता का संचालन कर रहे थे। चाहे मुख्यधारा के वाम नेता इसे स्वीकार नहीं करते परंतु वामपंथी दलों के प्रभाव में नक्सलवाद को फलने-फूले का खूब मौका मिला और इनके खिलाफ कार्रवाईयों में ढिलाई आने लगी। यूपीए सरकार ने इनके खिलाफ वायु सेना के प्रयोग का प्रस्ताव रखा तो वामपंथियों ने इसका विरोध किया। कहने को तो नक्सल प्रभावित इलाकों में केंद्रीय व राज्य के सुरक्षा बलों को भेजा गया परंतु साधनों के अभाव और राजनीतिक इच्छा शक्ति कमजोर होने के चलते सुरक्षा बल कुछ अधिक नहीं कर पा रहे थे। यही कारण था कि नक्सली हमलों में अधिकतर नुक्सान सुरक्षा बलों का ही होता रहा। वर्तमान सरकार ने इस समस्या को गंभीरता से लिया। केंद्रीय गृहमंत्री राजनाथ सिंह का स्पष्ट आदेश था कि गोरिल्लाओं के साथ गोरिल्ला की तरह लड़ा जाए। रोचक बात यह है कि नक्सलवाद को खत्म करने में सबसे अधिक सहयोग मनरेगा योजना ने दिया। इसे नक्सल प्रभावित इलाकों में प्रभावी ढंग से लागू करने का लाभ यह मिला कि स्थानीय लोगों को रोजगार मिलने लगा और वे नक्सलवाद से दूर होने लगे।

छत्तीसगढ़ की रमन सिंह सरकार ने गरीबों के लिए सस्ता अनाज योजना शुरू की जो घर-घर अनाज पहुंचाने लगी। ग्रेहाऊंड व कोबरा जैसे सुरक्षा बल तैयार किए गए और राज्य पुलिस प्रशासन को चुस्त दुरुस्त किया गया। पहले सुरक्षा बलों की कार्रवाई केवल गश्त तक सीमित थी और वे आर्तकियों के खिलाफ कार्रवाई करके वापिस कैंपों में पहुंच जाते। इससे नक्सलियों को फिर से खोई हुई जमीन प्राप्त करने व वहां शुरू किए जाने वाले विकास कार्यों को ध्वस्त करने का मौका मिल जाता।

वर्तमान सरकार ने सत्ता में आने के बाद रणनीति बदली। अब जिन इलाकों को सुरक्षा बल मुक्त करवाते वे वहीं टिक जाते और वहीं नया कैंप बनाने लगे। इससे स्थानीय लोगों में सरकार के प्रति विश्वास बढ़ा और सरकार की विकास संबंधी योजनाएं उन तक पहुंचनी शुरू हो गईं। सुरक्षा बलों को आधुनिक हथियारों के साथ-साथ नवीनतम तकनोलोजी से लैस किया गया। इससे सुरक्षा कर्मी अपनी बैरकों में बैठे-बैठे पूरे इलाके की निगरानी करने लगे। नक्सली इलाकों में विकास कार्यों को गति दी गई।

एनआईए ने आर्थिक नाकाबंदी कर नक्सलियों के धन के स्रोतों पर लगाम लगाई और नोटबंदी ने नक्सलियों की आर्थिक तौर पर कमर तोड़ दी। सबसे अधिक प्रभाव देश-दुनिया से वामपंथी विचारधारा के लगभग लुप्तप्राय- होने का पड़ा और युवाओं का इससे मोहभंग होने लगा। आज हालात यह है कि बहुत कम युवा वामपंथी विचारधारा ग्रहण करते हैं। जेएनयू में जिस तरह से वामपंथी दलों से जुड़े विद्यार्थियों ने देश विरोधी नारेबाजी की उसका प्रभाव भी नक्सलवाद के वैचारिक खात्मे के रूप में देखने को मिला। कुल मिला कर सभी प्रयासों का परिणाम यह निकल कर सामने आया कि 165 में से केवल 30 के करीब जिले ही अब इस समस्या से ग्रसित हैं। हाल ही में नक्ल के गढ़ गढ़चिरौली, बस्तर, सुकमा में नक्सलियों का सफाया किया गया और थोक भाव में नक्सलियों ने आत्मसमर्पण किया है उससे आशा बंधने लगी है कि शीघ्र ही देश इस समस्या से निजात पा लेगा।